देवबणी री बात

कृपाविस का सामुदायिक जंगल 'देवबणी/ओरण' संरक्षण अभियान

अंक 20 सितम्बर 2011

वन मे सहजीवन

आज सरकार कानून बनाकर मानव रहित वनों की कल्पना कर बाघ और जंगल सुरक्षित रखना चाहती है। जबकि वन हेतु मानव एवं बाघ का संतुलन जरूरी है। बाघ की सुरक्षा हेतु जंगल एवं मानव की विशेष जरूरत है। इन तीनों के बीच ऐतिहासिक और प्राकृतिक रिश्ता रहा है। इस रिश्तें को शायद कानून की जरूरत न हो चूंकि पिछले कानूनों के चलते यह रिश्ता कभी बना ही नही। कानून तो इन तीनों के आपसी रिश्ते और समन्वय को मजबूत करने हेतु बनाया जाना चाहिए था। सदियों पुराने के रिश्ते और अनुपम उदाहरण वनवासियों, वन एवं वन्य जीवों के बीच कितना गहरा और अनूठा रहा है, यह वनवासियों द्वारा बनाई गई स्वयं स्तरीय नियमावली, नीति और रीति से साफ नजर आता है।

जीव जन्तुओं और वनो को नुकसान न पहुचे इसके लिए वनों में रहने वाले मानव ने धराडी, दडा, देवबणी, अंशकालिक प्लायन, चकित चराई जैसी अनुठी विधियॉ अपनाई थी जिससे जल, जंगल जीव और मानव सभी सुरक्षित रह सके एक दूसरे के बीच बाधा न बने जो आज भी सरिस्का और अन्य वनों में है। अतः वन मे सहजीवन सम्भव है।

वनों में सहजीवन की सम्भावनाओं व प्रासांगिता को लेकर अनेकों अध्ययन देश में हुए है जो सिद्ध करते है कि जंगल, वन्य प्राणी व मानव साथ–साथ अच्छे से रह सकते हैं। उसी के आधार पर तो 'अनुसुचित और अन्य परम्परागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम 2006' बना है।

सरिस्का में सहजीवन व विस्थापन को लेकर 'कृषि एवं पारिस्थितिकी विकास संस्थान' (कृपाविस) द्वारा एक डोक्युमेन्ट्रि फिल्म का निर्माण किया गया है। इस डोक्युमेन्ट्रि को बनने का मुख्य उद्देश्य लोगो को जंगलो के प्रति जागरूक करना तथा इसके संरक्षण व विकास के लिए लोगों को प्रेरित करना। ग्रामीण समुदायों की आजीविका व जैव विविधता की दृष्टि से इसके संरक्षण की प्रासांगिकता को उभारना है। डोक्युमेन्ट्रि में सरिस्का के विभिन्न पहलुओं जैसेः ऐतिहासिकता, वर्तमान स्थिति, परम्परागत प्रबन्धन व्यवस्था, सरकारी नीति तथा विस्थापन को दिखाने का प्रयास किया है।

सरिस्का के विकास में लोगों के पारम्परिक ज्ञान, जीवंत परम्पराओ, विज्ञान और सूझ–बूझ को इस डोक्युमेन्ट्री में समझाया गया हैं। यह डोक्युमेन्ट्रि सरिस्का में सहजीवन संवर्द्धन हेतु नीति निर्धारकों, योजनाकारों, प्रशासन, स्वैच्छिक संस्थाओं, शिक्षको, राजनेताओं तथा ग्रामीणों के बीच जागरूकता बढ़ने में सार्थक होगी, ऐसा विश्वास है।

KRAPAVIS

कृषि एवं पारिस्थितिकी विकास संस्थान (कृपाविस)

कृपाविस बणी, गांव-बख्तपुरा

पो० सिलीसेढ़, जिला अलवर-301001 (राज.)

ई-मेल:krapavis_oran@rediffmail.com

सम्पादन : अमनसिंह व प्रतिभा सिसोदिया

जंगल संरक्षण की विभिन्न परम्परागत विधाए

(1) कांकड़बनी:– जहां दो या अधिक गावों की सीमाएं मिलती हों, उस स्थान पर किसी देवता जैसे:–भैरो जी को विराजमान समझकर लोग छोटे–छोटे काकड़ (पत्थर) देवताओं को श्रद्धापूर्वक समर्पित करते थे। उस स्थान पर सर्व सम्मति से निश्चित किया हुआ जंगल ही कांकड़बनी के नाम से जाना जाता था। यह जंगल प्रायः उत्तर–पश्चिम दिशा में होता था। इस जंगल का प्रबंधन व उपयोग समीपवर्ती सभी सम्बन्धित गांवों द्वारा सामूहिक रूप से किया जाता था।

(2) देवबणी–ओरण:– किसी देवी या देवता, साधक अथवा सिद्ध पुरूष के नाम से गांव में संरक्षित जंगल देवबणी या ओरण कहलाता है तथा यह देवता की सम्पत्ति मानकर उसके चारों तरफ गंगा जल एवं गौ दुग्ध मिलाकर फेरी लगाकर छोडा गया क्षेत्र व जंगल होता था। इसे भी लोग नुकसान नही पहुचाते थे। केवल आपत्ति व संकट के समय सर्वसम्मति से इसका उपयोग किया जाता था। प्रत्येक ओरण देवबणी में सामान्यतया कोई साधु या संत रहता है जो इसकी सुरक्षा व प्रबंधन का उत्तरदायित्व निभाता है। जिसके भरण–पोषण की जिम्मेदारी उस गांव के समुदाय की होती है।

(3) रखतबनी:– सभी गांव वालों की सहमति से अधिकतर गांव के उत्तर–पूर्व या उत्तर– पश्चिम में छोडे गये जंगल को रखतबनी कहा जाता था। इसका उपयोग सामान्य परिस्थितियों में न करके केवल अकाल व संकट के समय ही किया जाता था।

(4) वाल:– गांव के मन्दिर के गधीधारी पुजारी के नाम से छोड़ा गया जंगल जो केवल मन्दिर के ही काम लिया जाता था, वाल के नाम से जाना जाता था। ये वाल केवल मन्दिर ही नही राजा व जागीदार भी पशुओं के लिए प्रत्येक गांव में रखते थे। दो पहाडियों के बीच का मैदान भी वाल के नाम से जाना जाता था। कई गांवो के नाम वाल के नाम से है जैसे कैरवावाल।

(5) बीड़:– यह भी गांव सीमा में बहुत बड़ा संघन जंगल हुआ करता था। गांव के सभी लोग अकाल, संकट आदि विपरीत परिस्थितियों में ही यहां पर मवेशियों को चराते तथा चारा, ईधन व अन्य उपलब्ध जरूरत की चीजें लाया करते थे। ये अधिकतर निजी होते थे। पर एक सीमा तक सभी के उपयोग के लिए उपलब्ध हो जाते थे।

(6) रूध:– कुछ बीड क्षेत्र जिसमें खेती नही होती थी, उसे

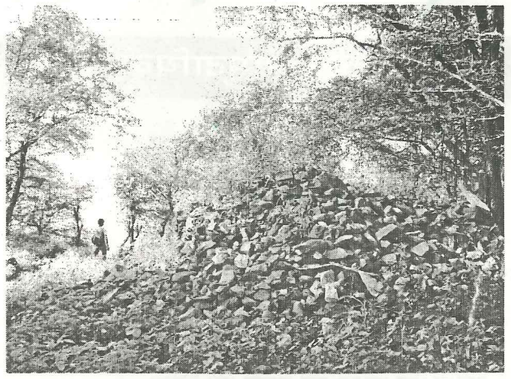

रूध घोषित किया जाता था। इसमें राजा के घोड़े गाय चरते थे। सामान्य जनता कर देकर यहां अपने पशु चरा सकती थी। आस–पास के लोग इसे अपनी चारागाह ही समझते थे।

(7) खाडू:– जंगल में अलग–अलग परिवार की मवेशियां अलग–अलग समुहों में चरती हैं। इस समूहों मे चराई को स्थानीय भाषा में खाडू कहते है। प्रत्येक खाडू को किसी जलस्त्रोत से भी जोड़ा जाता था।

(8) दडा:– जंगल से पशुओं के लिए सुखा घास काटने के लिए गांव वालों ने आपसी सहमति से पहाडी ढलान बाट रखे है जिन्हे दडा कहते हैं। तथा इन दडो का उपयोग पारिवारिक स्तर पर प्रबन्धित होता हैं।

(9) धराड़ी:– वृक्षों को बचाने की हमारी पारम्परारिक सुरक्षा व्यवस्था जो जाति–गोत्र कुल के आधार पर वृक्ष–संरक्षण करती है। सामाजिक पारिवारिक महत्व के अवसरों, संतान के जन्म, विवाह आदि पर अपनी धराडी वृक्ष की पूजा करते हैं। कृपाविस के एक अध्ययन के मुताबिक अलवर अकेले जिले में लगभग ऐसी 50 प्रजातियां है जो धराड़ी के तहत संरक्षित हैं।

(10) पानीढाल:– आज का वाटरसेड ही कल का पानीढाल हुआ करता था जिसे समुदाय बखुबी प्रबन्धित रखता था। सरिस्का को परम्परागत रूप में गांवों ने अपनी सीमाओं को पानी के ढलान के आधार पर बाँट रखा था तथा उस पानीढाल क्षेत्र का उपयोग व प्रबंधन उस गांव के लोगों द्वारा होता था। जबकि आज वाटरसेड प्रबंधन के लिए बड़े–बड़े इंजिनियर्स लगाये जाते है। अतः हमारा अनपढ़ कहा जाने वाला समाज आज के तथा कथित पढ़े–लिखे इंजिनियर्स से बेहतर प्रबंधन करते थे।

जंगल मे अधिकारों के लिए झूझता गांव: डावली

डाबली गांव सरिस्का क्षेत्र कोर नं.1 में पड़ता है यह एक राजस्व गांव है। इसकी ग्राम पंचायत अकबरपुर लगती है। डाबली में गुर्जर व मेव जाति के 92 परिवार रहते है। जिसमें 63 परिवार गुर्जर व 29 परिवार मेव समुदाय के लोग रहते है। इस गांव की जनसंख्या लगभग 300 जिसमें 70 प्रतिशत गुर्जर व 30 प्रतिशत मेव समुदाय के लोग रहते है। यह गांव लगभग 380 वर्ष पूर्व बसा था।

जंगलात विभाग के दस्तावेजों के अनुसार इस गांव की जमीन 100 हैक्टेयर है। गांव के देवीसिंह मास्टर के अनुसार पशुधन संख्या भैस 400, बकरी 700 व गाय 200 है। इस गांव मं 5वीं तक सरकारी स्कूल है। गांव में 2 कुँए है जो सूख चुके हैं। क्योकि यहां पर कुओं में पानी नही है इसलिए आज से करीब 7–8 वर्ष पूर्व यहां जलदाय विभाग ने नीचे लालपुरा गांव से डाबली तक पानी की पाइप लाईन डाली थी जिसे साढ़े सात हजार लीटर की प्लास्टिक टंकी से जोडा गया था। जिससे कुछ समय के लिए गांव वालो को पानी मिला।

गांव के नारायण पटेल के अनुसार पिछले चार महिने से पानी की एक बूंद भी टंकी तक नही पहुची। ग्रामीणों का आरोप है कि वन विभाग के इशारे पर पानी सप्लाई के लिए लगाए गए दोनों कर्मचारी पानी नही छोड़ते। अतः इस गांव के लोग व पशु एक ही जोहड में पानी पीते है।

जिला मुख्यालय से लगभग 25 किलोमीटर की दूरी पर स्थित डाबली गांव तक पहुचना आसान नही है, गांव तक पहुँचने के लिए करीब 5 किलोमीटर पहाड की पैदल चढाई है। आजादी के 65 साल बीत जाने के बाद भी यहां न चिकित्सा सुविधा है और न सडक, पानी–बिजली की भी कोई व्यवस्था नही हैं। मजबूरी में सदियों से यहां के मवेशी और ग्रामीण एक ही जोहड़ से पानी पीते है। इस गांव के हालात अब कभी नही बदलेगे, क्योंकि वन विभाग यहां के वाशिदों को दुसरे स्थान पर विस्थापित कर रहा है।

ग्रामीणों के अनुसार डाबली गांव आज से 380 वर्ष पूर्व मेव परिवार द्वारा बसाया गया था कुछ व्यक्ति गुर्जर समुदाय के यहां से गाय चराते वक्त गुजर रहे थे तो मेव बोला आप कहा जा रहे है तो उन्होने कहा जहा गांयो के लिए चारा मिल वहां जा रहे है तो मेव ने कहां यहां पर काफी जमीन है। तुम यहां पर अपनी गाय व स्वयं रह सकते है। गुर्जर ने कहा कि यह तो हमारी नही। तो मेव ने कहां मेरी बीबी के पेट में बच्चा है अगर वह लड़की हुई तो जमीन तुम्हारी और अगर लडका हुआ तो आधी तुम्हारी और आधी हमारी होगी और कुछ पश्चात उसके लडका हुआ जिससे जमीन दो हिस्से में बट गयी। उसी के अनुसार आज आधी जमीन मेव के पास व आधी गुर्जरों के पास रही है। यह खेती जागीरदारों के समय से करते आ रहे है, और इनके पास आज भी जमीनों के पट्टे की रसीद है।

यहां से आज 90 प्रतिशत मेव परिवार विस्थापित हो चूके है और 20 प्रतिशत गुर्जर परिवार विस्थापित हो चूके है। परिवार जिन्हे मुआवजा नही मिला या इन परिवारों का सर्वे नही हुआ इसका यह कारण है कि ये परिवार खाने व कमाने की वजह से यह नीचे रहते थे इसलिए उन परिवारों का सर्वे नही हुआ और आज ये परिवार वापिस डाबली में घर बनाकर रह रहे है। इनके पास जमीनों का पट्टा राशन कार्ड व मतदाता पहचान पत्र डाबली का ही है। इन परिवारों ने कहां अगर सरकार हमे मुआवजा देती है तो हम यहां से चले जाऐगे नही तो हम यही पर रहेगे।

हरिराम गुर्जर ने बताया कि जंगलात विभाग वाले विस्थापन हुए परिवार से उनकी जमीन को दाननामा में लिखा रहे और उन्हे केवल 10 लाख वाला पकैज दे रहे है। उसकी जमीन का कोई मुवावजा नहीं दे रहे हैं।

डाबली गांव के गुर्जरो ने बताया कि अगर हमें जंगलात विभाग वाले रास्ता, बिजली व पानी की व्यवस्था यही पर कर देते है तो हम यहां से जाना नही चाहते हैं। जंगलात विभाग हमें परेशान करने के लिए पृथ्वीपुरा गांव के रेबारी समुदाय लोगो के यहां लगभग हजारों ऊंट छुडवा रखे है जिससे कि उनके पशुओं का चारा खत्म हो जाऐगा। और ये यहां से चले जाऐगें।

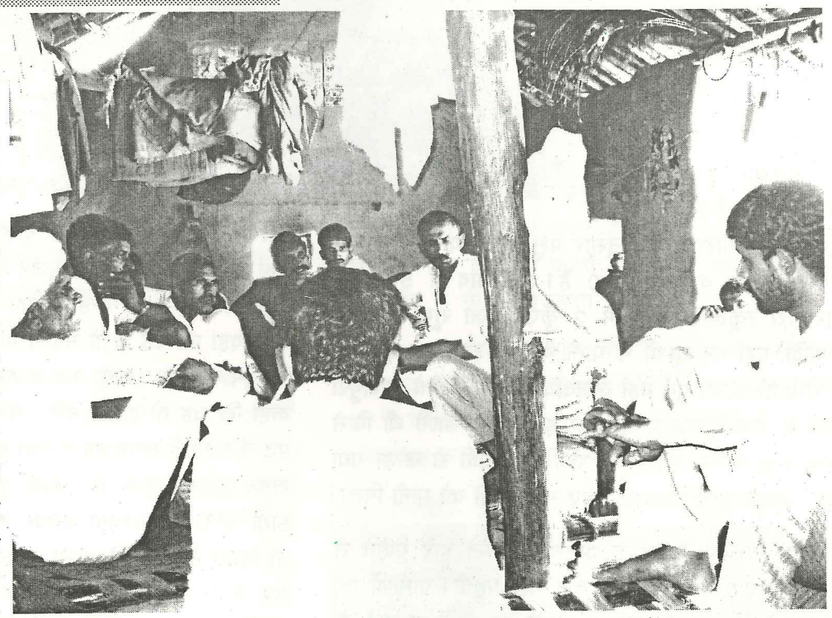

गांव वालो ने बताया कि आज से करीब 3 वर्ष पूर्व यहां पर जंगलात विभाग की जयपुर से उडन दस्ता आया और फिर रेबारी परिवारों ने उन्हे मार पीटकर भगा दिया बाद में नीचे लालपुरा गांव में उडनदस्ता व रेबारी परिवारों के बीच आपस में झडप हुई थी। ये सब सरिस्का के कर्मचारियों की मिलि भगत से रेबारी परिवारों ने उडनदस्ता जयपुर को भगा दिया क्योंकि रेबारी परिवार जंगलात वालो को पशु चराने के लिए रूपये दिया करते थे।

गांव वालो ने बताया कि विस्थापित हुऐ परिवारों का विघटन हो रहा है क्योंकि वे अपना–अपना मुआवजा लेकर कोई थानागाजी तो मालूताना जा रहा है तो दूसरा राजगढ तीसरा फिर अलवर जा रहा है, इस प्रकार भाईयों में विघटन हो रहा है।

यहां के समुदाय अपनी पिडाए निम्न प्रकार बयान करते हैं:

❖ वे यहां से विस्थापित नही होने चाहते है।

❖ विस्थापन केवल उसी स्थिति में ग्रामीणों को मान्य होगा यदि उन्हे यहां की अपनी खेती जमीन के बदले अन्यत्र बराबर खेती की जमीन मिले।

❖ लोग वन अधिकार अधिनियम 2006 को लेकर भी जागरूक हो रहे हैं। तथा अधिनियम के तहत वर्णित अधिकार व सुविधाऐं डाबली में ही मिले, यह मांग यहां के लोग कर रहे हैं। वे जानते है कि इस अधिनियम के तहत ऐसे समुदाओं को सहायता देना है जो अपने वन संसाधनों का संरक्षण करते आ रहे है और जहाँ समुदाय, सामुदायिक संसाधनों के संरक्षण एवं प्रबंधन की इच्छा जताते हैं।

❖ बहुत सारे ग्रामिणों को जंगलात विभाग द्वारा कराये गये सर्वे को लेकर आपत्तियां है जैसे–अधिक उम्र के व्यक्तियों को सर्वे सूची में परिवार यूनिट आयु सीमा से नीचे दर्शित करना (कई परिवार को सर्वे सूची में सम्मिलित नही किया गया, सर्वे कार्य में निष्पक्षता नही रखी गयी आदि)।

❖ जंगलात विभाग की मिलीभगत से बाहर के ऊंटो व बकरियो को चराई की गैर कानूनी अनुमति वन अधिकारी देते हैं।

❖ डाबली निवासियों को खेती की जुताई व आवश्यक सामग्री (बीज, खाद आदि) की लाने की अनुमति जंगलात विभाग से नही मिलती है।

❖ ग्रामीणो का कहना है कि विस्थापित किये गये कई परिवार वापिस लौट रहे हैं। क्योंकि उनको उपयुक्त मुवावजा व सुविधा नही मिल रहे है।

जंगल वासियों का अधिकार

देश में बाघ परियोजनाओं, अभ्यारणों व राष्ट्रीय उधानों से लोगो को विस्थापित करने का मुद्दा चरम पर है। राजस्थान के सरिस्का व रणथम्भौर से भी जंगल वासियों को बाहर बसाने के लिए सरकार पूरी ताकत लगा रही है। जिसमें जंगल वासियों को बहार बसाने के लिए सरकार पूरी ताकत लगा रही है। जिसमें जंगल वासियों के अधिकारों की अनदेखी हो रही है।

अनुसूचित जनजाति व अन्य आदिवासी: वन अधिकारों को मान्यता) अधिनियम, 2006 जैसे महत्वपूर्ण कानून की अवहेलना पूरी तरह से हो रही है। यह अधिनियम वनों में रहने वाले अनुसूचित जनजातियों के वन अधिकारों को मान्यता देता है और साथ ही उन समुदायों को भी जो पारम्परिक रूप से पीढ़ियों से जंगल में रहते आए है।

इस अधिनियम के तहत समुदायों को विभिन्न अधिकारों के साथ गैर काष्ठीय वन संसाधनों को इकट्ठा करने या उपयोग का अधिकार है। यह सिर्फ उन्ही वन संसाधनों के लिए मान्य है जो अधिकार–पात्र परम्परागत रूप से गांव के अन्दर या बाहर से इकट्ठा करते आए हैं। इसमें सभी प्रकार की पौध प्रजातियॉ बॉस, पेड़ों के ठूठ, बेंत, शहद, मोम, टसर, ककून, लाख, तेन्दु आदि) की पत्तियॉ, औषधीय पौधे, जड़े, जड़ी–बूटियॉ, कंद इत्यादि शामिल हैं।

चरवाहों या घुमंतु समुदायों का मवेशी चराने या पारम्परिक रूप से प्राकृतिक संसाधनों का मौसमी उपयोग करने का अधिकार।

यही नही यह अधिनियम जंगल में रहने वाले लोगों को विकास सुविधाओं का अधिकार भी देता है। सरकार निम्नलिखित सेवाऐं उपलब्ध कराने के लिए वन भूमि का उपयोग कर सकती है। इसका प्रबंध सरकार करेगी और इन्हें वन संरक्षण अधिनियम की पाबंदियों से छूट होगी:

क. विद्यालय
ख. अस्पताल या दस्तावेज
ग. राशन की दुकानें
घ. बिजली व फोन की लाइनें
ड. टंकिया या अन्य छोटे तालाब
च. पेयजल के लिए पानी के पाईप
छ. सूक्ष्म–सिचाई नहरें
ज. पानी या बारीश का पानी संग्रह करने के ढ़ॉचे
झ. ऊर्जा के गैर–परम्परागत स्रोत
ण. हुनर बढाने व व्यवसाय के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम
ट. आंगनवाड़ी
ठ. सड़के
ड. सामुदायिक केन्द्र

परन्तु वन भूमि के इस प्रकार के उपयोग को तभी स्वीकृति मिल सकी है जब निम्नलिखित शर्ते पूरी की गई हो: उपयोग मे आने वाली वन भूमि 1 हैक्टेयर से कम हो। 1 हैक्टयर में 75 या उससे कम पेड़ ही काटने पड़े। ऐसे विकास कार्यक्रमों को ग्राम सभा की स्वीकृति हो।

किस प्रकार की भूमि पर ऐसे अधिकार दिए जा सकते है? हर प्रकार की "वन भूमि" पर ऐसे अधिकार दिया जा सकते हैं। "वन भूमि" को निम्नलिखित परिभाषा दी गई है–"किसी भी प्रकार की भूमि जो वन क्षेत्र में आती हो जिसमें अवर्गीकृत वन, वर्तमान समय में कहलाए जाने वाले वन, रक्षित वन, आरक्षित वन, अभ्यारण्य व राष्ट्रीय उद्यान सभी शामिल है।"

अधिनियम की धारा 3(1) मे जंगल में रहने और खेती करने का अधिकार भी शामिल किया गया है। साथ ही समुदाय के निसतार अधिकार या जमीन्दारी जैसी व्यवस्था के अंतग्रत मान्यताप्राप्त अधिकार भी इसमें शामिल हैं।

पशुओं में खुरपका-मुंहपका रोगः परम्परागत चिकित्सा द्वारा उपचार

यह जल्दी से फैलने वाला संक्रामक रोग है। यह रोग शीत ऋतु, फाल्गुन और चैत मास में गाय, भैस, सुअर, बैल को ज्यादा होता है। इस संक्रामक रोग में समय से इलाज जरूरी है। इस रोग से बचने के लिये हर साल टीकाकरण कराना चाहिये।

कारण:–खुरपका–मुँहपका रोग ''एप्थो'' वायरस से फैलता है। इस रोग के विषाणु मुंह में और खुर के फोड़े में होते है। यह बीमारी स्वस्थ पशु को बीमार पशु के सम्पर्क में आने से फैलती है अथवा बीमार पशु की खुराक खाने से या एक स्थान पर बीमार पशु के साथ तालाब में पानी पीने से फैलती है। वातावरण में श्वास लेने से भी यह फैलता है।

लक्षण:–पशु के मुँह और खुर के बीच में फोडा पडता है। पशु को 104 से 105 डिग्री बुखार होता है जानवर के मुँह में, गलाफो में, मसूडो में ओर जीभ पर सूजन रहती है। तथा फोड़े भी होते है इन फोड़े की वजह से जीभ में दर्द होता है। इसकी वजह से निरन्तर लार टपकती है। इन फोड़ो के फटने के बाद लाल रंग का फोड़ा हो जाता है। पशु के मुँह में जख्म पड़ने के बाद सूखी घास नही खा पाता। पशु के खुर में तथा खुर के आसपास फोड़े हो जाते है।

रोकथाम के उपाय:– पीड़ित पशुओं को समुह में सामान्य पशुओं के साथ पानी पिलाने नही ले जाना चाहिये। इस रोग से पीड़ित जानवर को चराने नहीं ले जाना चाहिये। ऐसे जानवर को पशु गृह में खाना दे देना चाहिये। दूध वाले पशु को इस रोग का बुरा असर होता है, इस रोग से बचने के लिए पशुओं का नवम्बर–दिसम्बर में टीकाकरण कराना चाहिये। नरम खुराक तथा हरी ताजा घास देनी चाहिये।

परम्परागत चिकित्सा द्वारा उपचार:–

<u>तेल तथा कपूर की गोली का उपयोग</u>:–पशु के खुर में रोग होने पर उसके उपचार के लिए 100 ग्राम मूंगफली के तेल में कपूर की गोली उबालकर, घुल जाने पर उस तल को ठन्डा करके, एक सप्ताह तक पशु के खुर पर लगाना चाहिये। उस उपचार से पशु के खुर के कीड़े मर जाते है तथा पूरा आराम मिल जाता है।

<u>मेंहदी के पत्ते का उपयोग</u>:– पशु के खुर का रोग होने पर 200 ग्राम मेहदीं के पत्ते पानी में उबालकर ठन्डा करके खुर पर लगाना चाहिये। मुंह आने पर मेहदी के पत्ते कूटकर लेप करें।

<u>मुंह आने पर तिल का उपयोग</u>:– मुंह आने पर पशु के मुंह

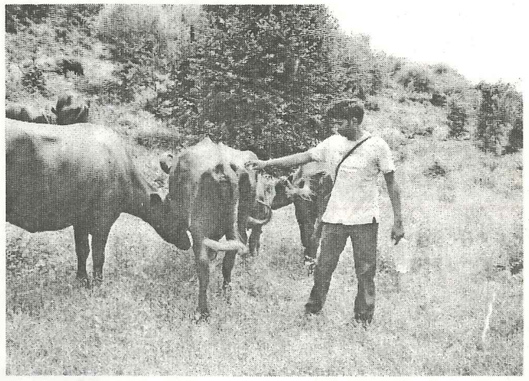

में फोड़े पडने पर बड़े पशु को नाल से 100 से 200 ग्राम तिल का तेल बहुत सुबह पिलाना चाहिये। इससे मुंह में चिकनाहट आती है। इसके बाद एक घण्टे तक सूखा चारा नही देते। उपचार 3 दिन तक एक बार करना चाहिये।

<u>तेल मिर्च का उपयोग</u>:– चार सूखी मिर्च का पाउडर बनाकर, 50 से100 ग्राम गर्म तेल में डालकर, ठन्डा करके, पशु के खुर में लगाया जाता है। इसके बाद चिकनी मिट्टी का लेप खुर पर लगाते है। यह उपचार दो दिन तक करना चाहिये। सवाभाई का मानना है कि इस उपचार को खुर के जीवाणु मर जाते है।

<u>गुलर के पत्ते व फल का उपयोग</u>:–गुलर के पत्ते व फल का 250 मिली रस निकालकर पशु के मुँह में मसुडो व जीभ पर दिन में दो बार चार दिन तक लगाया जाता है। इसके अलावा पशु के पैर के खुर में भी यह रस लगातार कपड़े की पटटी बांधी जाती है। यह उपचार दिन मे एक बार ऐसे पांच दिन तक किया जाता है। वैज्ञानिक के बताऐ अनुसार गुलर में टेनिन नामक द्रव होने की वजह से पशु के मुंह व पैर के खुर में फोडे में राहत मिलती है।

<u>शीसम के तेल का उपयोग</u>:– शीसम की 1 से 1.5 किलो लकडी की 1.5 इंच के टुकडे करके एक मटका लेकर उसमें छेंद करके मटके को ईंट पर रखकर फिर उस छेद के नीचे एक कटोरी रखनी चाहिऐ। इस मटके के अन्दर शीसम के छोटे–छोटे टुकडो को डालकर, सुलगाकर, शीसम की लकडी से चिकना प्रवाही निकलता है। जो कि नीचे कटोरी मे ईकटठा होता है। यह रस 4–5 दिन खुर पर लगाते है।

<u>तुलसी के पत्तो का उपयोग</u>:– आधा किलो तुलसी के पत्तो का रस चार पशुओ व एक छोटे पशु के लिए पर्याप्त होता है। यह तीन दिन तक रोज एक बार दिया जाता है।

मिश्रित खेती – टिकाऊ खेती

दो या दो से अधिक फसलों को एक साथ बोना मिश्रित खेती कहलाती है। राजस्थान राज्य में मिश्रित खेती हमारे पूर्वज करते आये हैं और आज हम भी कर रहे हैं। आज के समय में फलदार खेती के साथ हम अनाज फसल, दाल फसल व सब्जी फसलों को बोते हैं जिससे कि फलदार पौधों के नीचे की जमीन भी अन्य फसलों के काम आ सके। मिश्रित खेती का उपयोग एक फसल बोने पर फसल का उगना व उसकी पैदावार पर किसान इतना भरोसा नही करता इस लिए उस फसल के साथ–साथ दूसरी को भी बोया जाता है। जिससे भी पैदावार पर बहुत फर्क पड़ता है। और किसान को दोहरा लाभ होता है।

<u>खरीफ मिश्रित खेती</u>

किसान खेती करने में अपने क्षेत्र में शिक्षक होता है। वह खरीफ की फसल को मिश्रित करके बोता है। तो उसे एक साथ कई फसल का दोहरा लाभ मिलता है और उसकी खेती भी उपजाऊ बन जाती है। क्योंकि दाल वाली फसल जड़ो द्वारा राइजोबियम जिवाणु छोड़ते हैं। जो भूमि को उपजाऊ बना देते हैं।

खरीफ मे किसान निम्न फसलें मिश्रित करके बोता है:–

❖ बाजरा, तिल्ली, मूंग, अरहर, उड़द व बेल वाली फसल को मिश्रित बोया जाता है। जबकि अरहर को मिश्रित करके बोते है तो वह अप्रेल महिने में पकती है इस अरहर को वैशाखी अरहर कहते है जबकि बाकि फसल तो 90 से 120 दिन में काटली जाती है शेष अरहर खड़ी रह जाती है।

❖ ज्वार, देशी तिल, उड़द व बेल वाली फसल कचरी को मिश्रित करके बोते है।

❖ मक्का, बाजरा, मीठी ज्वार मिश्रित में बेलवाली फसल

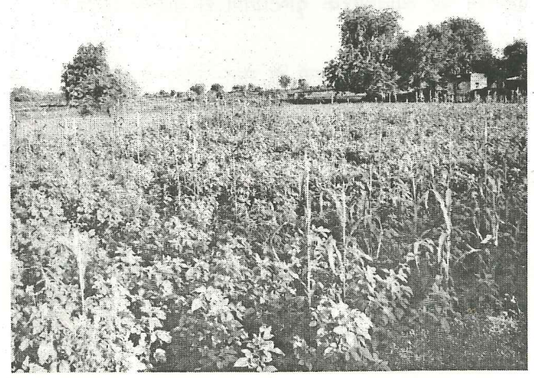

खीरा, आरिया, कचरी, घीया किसी एक को इसमें मिश्रित करके बोते है।

❖ ग्वार, ज्वार, चौला।

<u>रबि मिश्रित खेती</u>

रबि की फसलें किसान मिश्रित करके निम्न प्रकार हैं:–

❖ चना के खेत में सरसों को एक पंक्ति बनाकर बोते है जिससे दोनों फसलें पैदा होती है। पंक्ति की दूरी लगभग 5 फुट होती है। जबकि चना पूरा खेत में बोया जाता है।

❖ गेहूँ के खेत में भी सरसों को एक पंक्ति बनाकर बोते हैं।

❖ चना व जौ की फसलें मिश्रित करके बोने को बेजड़ कहते हैं।

❖ गेहूँ, मूली, सींगरी व अरबी मिश्रित खेती में अरबी को भी गेहूँ के साथ बोया जाता है। जब गेहूँ बो देते है इसके तुरन्त बाद अरबी को भी गेहूँ के खेत में लगा दी जाती है। अरबी गेहूँ की फसल को कोई नुकशान नही करती हैं। उसकी यह विशेषता होती है कि वह तब ही फूटती है जब गेहूँ कटते हैं।

❖ फलदार पौधों के साथ भी मिश्रित खेती करते है किसी भी फलदार वृक्ष के नीचे खेती या सब्जिया पैदा करते हैं।

कैरवावाल पंचायत में कृपाविस द्वारा बाजरा व मिश्रित खेती पर अध्ययन व फसल प्रदर्शन लगाने से यह अनुभव आया है कि मिश्रित खेती जो परम्परागत रूप से भी की जाती है। उसके परिणाम किसान को अधिक लाभकारी होते हैं तथा इसे टिकाऊ खेती कह सकते हैं।

कैरवावाल किसानों का मानना है कि गोबर में उपलब्ध खरपतवर के बीजों को कैचुवें खा जाते है। जिससे वर्मीकम्पोस्ट खाद डालने से अनाज में स्वाद अच्छा होता है। धीरे–धीरे किसान यहां पर रासायनिक खाद का इस्तेमाल कम कर रहे हैं।

कैरवावाल के किसान खेत में फलदार वृक्ष जैसे:–आँवला, अनार, लिसोड़ा, बैंर, पपीता, निंबू, करोंदा इत्यादि लगा रहे हैं। यहां के लोगों ने अपने खेत पर फसल, सब्जी उत्पादन के साथ ही अच्छी नस्ल के पशुपालन पर विशेष ध्यान दे रहे है। अच्छी नस्ल का मुर्रा सांड रख कर भैंस नस्ल सुधार कर रहे है। ये सभी प्रयोग यहां के किसान मिश्रित खेती को ध्यान में रखते हुए कर रहे हैं। तथा इस हेतू अन्य जिलों के अच्छे किसानों से आदान–प्रदान करते हैं।

सामलात देह पर कार्यशाला

30–31 जुलाई 2011 को कृपाविस ने सामलात देह को लेकर भूरासिद्ध स्थित कृपाविस केद्र पर एक मिटिंग आयोजित की। जिसमें विभिन्न सरकारी विभागों, पंच, सरपंच, पंचायत समिति सदस्य, स्वयं सेवी संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। कार्यशाला का उद्देश्य कृपाविस द्वारा सामलात देह पर अध्ययन के अनुभवों को आदान–प्रदान करना व इस मुद्दे पर जागरूकता पैदा करना, अच्छी पद्धतियों पर चर्चा करना था। यह अध्ययन सेवा मन्दिर के सहयोग से तीन गावों कैरवाड़ी, बख्तपुरा व कालीखोल मे किया जा रहा है।

कार्याशाला में सामलात देह या कॉमन प्रोपर्टी रिर्सोस को परिभाषित किया गया कि ऐसे संसाधन जिन पर एक समुदाय या गाव के लोगों का समान अधिकार हो अर्थात इसमें रख–रखाव प्रबन्धन, उपयोग, बचाव और निर्माण में उस समुदाय या गांव के लोगों का बराबर का हक और दायित्व हो। इस तरह के संसाधनों के वर्ग में सामुदायिक वन देवबणी ओरण, चरवाह, परती भूमियां, गौरा, जलधाराओं की नालियाँ, गाव के जोहड, तालाब, बावडी छोटे–बांध, चौपाल, थाई, श्मशान, मन्दिर, धर्मशाला, पनघट के कुए, नदी–नाले आदि आते हैं। कार्यशाला में संभागियों ने इन सभी संसाधनों को लेकर विस्तार से प्रस्तुतिया दी। सरकारी जमीन, चारागाह, पहाड़ व तालाब को सामुदायिक ऐतिहासिक, सांस्कृतिक योगदान तथा उनके सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक कारणों पर प्रकाश डाला।

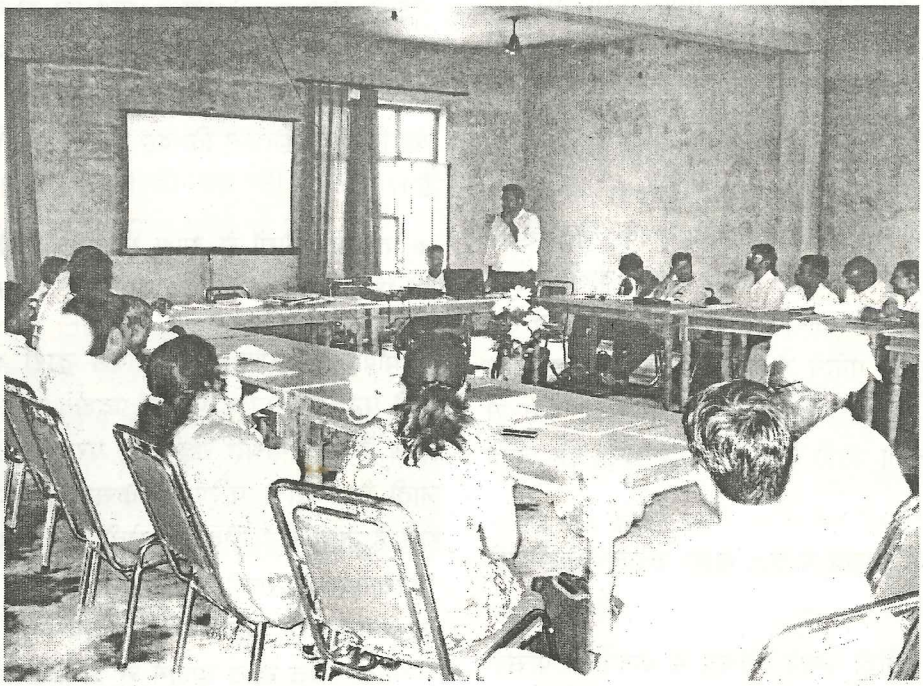

सामलात देह के स्वरूप, विकास, संरक्षण, उपयोग और प्रबन्धन पर व्यावहारिक दृष्टिकोण से वर्तमान सन्दर्भ मे विचार करने पर निम्न बाते, सार में, सामने आई:

1. सामलात देह का निर्माण भूमि, वन, जल और कई प्रकार के प्राकृतिक संसाधनों के मेल–जोल से होता है।
2. सामलात देह स्थानीय लोगों की जीवन पद्धति का एक मुख्य भाग रहे हैं–कृषि में, पशुओं के भरण पोषण में तथा खाध पदार्थ प्राप्त करने में बहुत महत्वपूर्ण योगदान रहा है।
3. समुदाय के लोगों की इन संसाधनों तक पहुच होती है, प्रतिबन्ध नही।

कृषि एवं पारिस्थितिकी विकास संस्थान (कृपाविस), बख्तपुरा, पो० सिलीसेढ झील, अलवर (राज०) द्वारा जनहित में प्रसारित।
मुद्रक: जय बाबा प्रिन्टर्स, स्टेशन रोड़, अलवर। लेआउट सहायक : शिव कुमार गुप्ता व बनवारी लाल कोली